International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 07-10-2022, Accepted: 24-10-2022, Published: 09-11-2022
Volume 8, Issue 6, 2022, Page No. 1-2

स्वयं की खोजः योग

डॉ० सोनिया
सहायक प्राध्यापक, स्नातकोत्तर राजकीय कन्या महाविद्यालय, चंडीगढ़, पंजाब, भारत

सारांश
मानव हमेशा से ही सुख, शांति व आनंद की खोज में लगा रहा है। भौतिक विकास और वैभवता व्यक्ति का "जीने का स्तर" उठाते हैं, जबकि आतंरिक आध्यात्मिक पुनर्वास व्यक्ति का "मूल जीवन स्तर"। भौतिक वैभवता एक व्यक्ति को तब तक सुख की अनुभूति नहीं करवा सकती है, जब तक कि व्यक्ति के आतंरिक व्यक्तित्व में निखर न आ जाये। आध्यात्म के मार्ग से यह निखार संभव है। परन्तु भौतिक एवं सांसारिक संपदाओं की चाह ने मानवी मूल्यों का हनन किया है। इन सभी विकास के मार्गों के दौरान मानव ये भूल गया है कि स्वास्थ्य सबसे अधिक महत्व का विषय है।
स्वस्थ व स्फूर्त रहने के लिये मानव कई प्रकार की क्रियाओं को करता है। कई प्रकार के खेलों व क्रीडाओं के द्वारा भी व्यक्ति स्वस्थ रह सकता है। उनमे से एक है – योग। वेदांत के मतानुसार – "जीव और आत्मा के मिलन की संज्ञा ही योग है।" महात्मा 'महर्षि' याज्ञवल्क्य ने भी इसी बात की पुष्टि की है। योग से मानव के समस्त शारीरिक ही नहीं बल्कि मानसिक रोगों व द्वेषों का भी समाधान संभव है। व्यावहारिक रूप से योग की शुरुआत तब से ही हो गयी थी जब से मानव रूपी जीव ने अपने अस्तित्व को पहचाना था। और यहीं से व्यक्ति ने योग के मार्ग पर चलते हुए स्वयं को खोजना शुरू किया।
योग वशिष्ट के अनुसार – "संसार–सागर से पार होने की युक्ति को ही योग कहते हैं।" ये ऐसी मानसिक एवं शारीरिक प्रशिक्षण विधि है, जो कि योगासनों, स्वास सम्बंधित व्यायामों, ध्यान, मुद्रा आदि सम्बंधित रहते हुए एक व्यक्ति को शान्त चित करते हुए सच्चाई का बोध करवा पाने में सक्षम है। योगी रामचरक के शब्दों में "हम सभी अनंत शक्ति के स्वामी है और इस शक्ति के रहस्य से परिचित कराने की कला योग विज्ञान में निहित है।"

मूल शब्दः योग, आत्मा, परमात्मा

प्रस्तावना

योगेन चित्तस्य पदेन वाचां मलं शरीरस्य च वैद्यकेन ।
योऽपाकरोत्म प्रवरं मुनीनां पतंजलिं प्रांजलिरान्तौस्मि ।।

दोनों हाथों को जोड़ मुनियों में श्रेष्ठ पतंजलि को नमन करते हैं, जिन्होंने मानसिक–विकारों को योग से, वाच्य–विकारों को व्याकरण से तथा शारीरिक–विकारों को आयुर्वेद से दूर कर मानव समुदाय का उपकार किया है।
पिछली कई सदियों से मानव रूपी जीव एक विशिष्ट प्रकार की प्रक्रिया में लीन रहा है। एक ऐसी प्रक्रिया जो उसे सर्वोत्तमता एवं सर्वश्रेष्ठता की ओर ले जा रही है। उसने विकास व तरक्की के मार्ग पर कई मीलों सफ़र तय किया है। वो कई क्षेत्रों में आगे बढ़ा है, साथ ही साथ उसने अपने कई सपनों को सच्चाई का जामा भी पहनाया है। कई वैज्ञानिक, शोधकर्ता एवं तकनीकीकर्ता अभी भी कई नयी चीजों के आविष्कारों में लगे हुए हैं और कई लोगों ने हमारे जीने के ढंग को भी बदला है। संसार को जीने का एक आरामदायक स्थान तथा जीवन की भौतिकता को सरल, सुगम व खुशमय बनाने के लिए कई नये यंत्रों एवं उपकरणों को विकसित किया जा चुका है।
मानव हमेशा से ही सुख, शांति व आनंद की खोज में लगा रहा है। भौतिक विकास और वैभवता व्यक्ति का "जीने का स्तर" उठाते हैं, जबकि आतंरिक आध्यात्मिक पुनर्वास व्यक्ति का "मूल जीवन स्तर"। भौतिक वैभवता एक व्यक्ति को तब तक सुख की अनुभूति नहीं करवा सकती है, जब तक कि व्यक्ति के आतंरिक व्यक्तित्व में निखर न आ जाये। आध्यात्म के मार्ग से यह निखार संभव है। परन्तु भौतिक एवं सांसारिक संपदाओं की चाह ने मानवी मूल्यों का हनन किया है।
जीवन को, निरंतर चल रही प्रक्रियाओं की एक धारा समान भी परिभाषित किया जा सकता है। देखना केवल यह है कि यह धारा किस दिशा में ओर किस वेग से बहती है। हरेक प्रक्रिया दैनिक जीवन में कई नतीजे सामने लाती है। यह नतीजे कभी अच्छे, कभी बुरे तो कभी सामान्य ही रहते हैं।
विभिन्न तकनिकी क्षेत्रों व शारीरिक सुख एवं आराम प्राप्ति के पथ पर बढते हुए मानव ने कई प्रकार के नये–नये, अनचाहे व अनजाने मेहमानों को न्यौता दे डाला है। जिन्होंने मानव कि जीवन को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से दुषित किया है। उन्हें यदि प्रदुषण कहा जाए, तो कोई संकोच नहीं होगा। वायु का प्रदुषण, ज़मीन का प्रदुषण, जल का प्रदुषण, समाज का प्रदुषण, शारीरिक प्रदुषण, मानसिक प्रदुषण, जो सभी आगे चल कर कई परेशानियों व विकारों का कारण बने हैं। इन सभी विकास के मार्गों के दौरान मानव ये भूल गया है कि स्वास्थ्य सबसे अधिक महत्व का विषय है।

तेषां मुक्तिकरं मार्ग मायाजालनिकृन्तनम् ।
जन्ममृत्युजराव्याधिनाशनं मृत्यु तारकम् ।।
– योगतत्वोपनिषत् ।। ५ ।।

अर्थात् सब जीव माया के सुख–दुःख रूपी जाल में फसें हैं। इस माया के जाल को काट कर उनकी मुक्ति का मार्ग दिखलाने वाला और जन्म, ज़रा, व्याधि से छुटकारा दिलाने वाला मार्ग योग ही है।
स्वस्थ व स्फूर्त रहने के लिये मानव कई प्रकार की क्रियाओं को करता है। कई प्रकार के खेलों व क्रीडाओं के द्वारा भी व्यक्ति स्वस्थ रह सकता है। उनमे से एक है – योग। यूँ तो योग सिर्फ खेल ही न रहकर काफी विस्तृत भी है। सभी अन्य खेलों द्वारा व्यक्ति को अपार शक्ति मिल पाती है। परन्तु ये सभी खेल गतिविधियाँ शारीर के आतंरिक स्वस्थ्य व आनंद पर कम मगर बाहरी मांसपेशियों के विकास पर आधिक ध्यान देती हैं।

व्यक्ति आमतौर पर यह समझता है कि हिमालय चले जाना, सर के बल उलटे हो जाना, आग अंगारों पर नाचना, ज़मीन में आधे शरीर को दबाना, कई दिनों तक भोजन ग्रहण करना, कई दिनों तक बिना बोले रहना, या कुछ इसी तरह कि क्रियाओं में लगना योग है। क्या आप समझते हैं कि यह योग है?

वैसे योग सब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'युज' सब्द से हुई है, जिसका अर्थ है – जोड़ना या मिलाना। योग हमारी इच्छा का प्रभु की इच्छा से मिलना है, यानि आत्मा का परमात्मा से मिलन। वेदांत के मतानुसार – "जीव और आत्मा के मिलन की संज्ञा ही योग है।" महात्मा 'महर्षि' याज्ञवल्क्य ने भी इसी बात की पुष्टि की है। योग से मानव के समस्त शारीरिक ही नहीं बल्कि मानसिक रोगों व द्वेषों का भी समाधान संभव है। योग शरीर के समस्त आंतरिक एवं बाहरी अंगों को क्रियावान बनाते हुए प्रत्येक अंग की कार्यप्रणाली पर अत्यंत बढ़िया असर डालता है।

भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा योग का अर्थ समझाते हुए कहा गया है – 'समत्वं योग उच्यते' अर्थात समत्व (जीवात्मा और परमात्मा के एकीकरण) का नाम योग है। इसी ग्रन्थ के ६वें अध्याय में पुनः वे कहते हैंः 'योग कर्मसु कौशलम्' अर्थात प्रत्येक कार्य को कुशलता से संपन्न करना योग है।

योग कोई जादू–माया जाल नहीं है। योग कोई तंत्र–मन्त्र नहीं है, योग कोई धर्म–जाति नहीं है। योग हिमालयवास नहीं है, योग केवल एक खेल नहीं है, सिर्फ वैज्ञानिक आधार नहीं बल्कि एक कला है। न केवल एक खेल प्रतियोगिता या प्रदर्शन है, बल्कि योग सम्बंधित है मानव से। योग सम्बंधित है हमारी आन्तरिक आत्मा से, योग सम्बंधित है है हमारे मन से, हमारे शरीर से, हमारी आत्मा से। स्वामी शिवानन्द सरस्वती के शब्दों में – ष्योग उस साधना प्रणाली का नाम है जिसके द्वारा जीवात्मा तथा परमात्मा की एकाग्रता का अनुभव होता है एवं जीवात्मा तथा परमात्मा के साथ ज्ञानपूर्वक संयोग होता है।"

परम्परागत रूप में योग के रचयिता भगवान शिव शंकर जी को माना गया है। उन्होंने ही माता पारवती जी को अपनी पहली शिष्या के रूप में योग का ज्ञान दिया था। और वहीं से इस परंपरा की शुरुआत मानी गयी। शिवशक्ति का रूप योग का आधार भी माना गया है। और इसी का पुरुष–प्रकृति से गहरा सम्बन्ध भी है। प्रत्यभिज्ञा दर्शन के अनुसार – "शिव तथा आत्मा के अभेद ज्ञान का नाम ही योग है।"

व्यावहारिक रूप से योग की शुरुआत तब से ही हो गयी थी जब से मानव रूपी जीव ने अपने अस्तित्व को पहचाना था। और यहीं से व्यक्ति ने योग के मार्ग पर चलते हुए स्वयं को खोजना शुरू किया। यही एक ऐसा मार्ग सिद्ध हुआ है जिसके द्वारा व्यक्ति आत्मा चिन्तन करके जीवन के सभी रहस्यों को जान कर सत्य को प्राप्त कर परमात्मा से मिल पाता है।

योग अपने आत्म चिंतन का ढंग है। इसमें आत्मा और शारीर ब्रह्माण्ड में विलीन हो जाते हैं। यह एक ऐसा मार्ग है – जिसमे ध्यान, विविध योगासनों व अन्य सरल, सहज एवं नियमबद्ध क्रियाओं के द्वारा व्यक्ति सभी प्रकार की इन्द्रियों के बन्धनों से ऊपर उठा पता है। योग वशिष्ट के अनुसार – "संसार–सागर से पार होने की युक्ति को ही योग कहते हैं।" ये ऐसी मानसिक एवं शारीरिक प्रशिक्षण विधि है, जो कि योगासनों, स्वास सम्बंधित व्यायामों, ध्यान, मुद्रा आदि सम्बंधित रहते हुए एक व्यक्ति को शान्त चित करते हुए सच्चाई का बोध करवा पाने में सक्षम है। ये शारीरिक एवं मानसिक आधार रखने वाला उत्तम ढंग है।

परमहंस स्वामी निरंजानंद सरस्वती "अशुद्ध मन का अतिक्रमण, मन का शुद्धिकरण तथा शुद्ध मन की आत्मिक ऊर्जा को जाग्रत् करके व्यक्ति मुक्ति प्राप्त करता है। मुक्ति की प्राप्ति के लिए उसे अशुद्धता से बहार निकल कर शुद्धता में जाना होगा तथा शुद्ध मन की मनीषा को जाग्रत् करना होगा।"

योग का अंतिम लक्ष्य नियंत्रण ही कहा जा सकता है। नियंत्रण कि एक ऐसी प्रक्रिया, जिससे व्यक्ति का भटकना असंभव है। इस स्थिति एवं अवस्था पर पहुँच कर व्यक्ति अपने मन, शरीर, समस्त इन्द्रियों अथवा स्वयं का ही स्वामी बन जाता है। उसके सभी कार्य उसकी इच्छाओं के अनुसार होते जाते हैं। उसका शारीर व मन उसके सभी आदेशों का स्वेच्छा से पालन करते हैं। वह अपने जीवन के सभी पक्षों व कर्मों को निष्ठा व लग्न से पूर्ण कर पाता है।

सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार "योग वह पुरातन पथ है जो व्यक्ति को अँधेरे से प्रकाश में लाता है।" महर्षि पतंजलि ने योग दर्शन के सूत्र में कहा हैः 'योगश्चितवृत्ति निरोधः' मन की वृतियों (रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द के लोभ में दौड़ाने) का रोकना योग है, अर्थात चित्त की चंचलता का दमन ही योग है। इस प्रकार जीवन के वास्तविक सत्य की खोज संभव हो पाती है तथा जीवन को एक नया अर्थ मिल जाता है। योगी रामचरक के शब्दों में "हम सभी अनंत शक्ति के स्वामी है और इस शक्ति के रहस्य से परिचित कराने की कला योग विज्ञान में निहित है।"

संदर्भ सूची

1. बहिरंग योगः योगेश्वरानन्द परमहंस, योग निकेतन ट्रस्ट, नयी दिल्ली, 2011.
2. 108 उपनिषद–ब्रह्म विद्या खण्डः श्रीराम शर्मा, संस्कृति संस्थान, बरेली, 2004.
3. 108 उपनिषद–ज्ञान खण्डः श्रीराम शर्मा, संस्कृति संस्थान, बरेली, 2004.
4. 108 उपनिषद–साधना खण्डः श्रीराम शर्मा, संस्कृति संस्थान, बरेली, 2004.
5. घेरण्ड संहिता (महर्षि घेरण्ड कीः स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती, योग शिक्षा का भाष्य) योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, 2011.
6. हठयोगप्रदीपिकाः परमहंस स्वामी अनन्त भारती, चौखम्भा ओरियन्टालिया, दिल्ली, 2013.
7. घेरण्ड संहिताः चमनलाल गौतम, संस्कृति संस्थान, बरेली, 1999.
8. बी०के०एस० आयंगारः सभी के लिए योग, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2013.
9. बी०के०एस० आयंगारः योग द्वारा स्वस्थ जीवन, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2011.